भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका
वर्ष 33 अंक (2) दिसम्बर 2025 पृ. 138-144
DOI: 10.56042/bvaap.v33i2.27177

प्राचीन भारतीय इतिहास में कृषि विज्ञान

दीक्षिता अजवानी
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर परिसर, राजस्थान 302 018 (भारत)
[ई-मेल : dikshitajwani@gmail.com]

सारांश

प्राचीन भारतीय इतिहास में कृषि विज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान था, और इसका विकास प्राकृतिक संसाधनों के कुशल प्रबंधन और कृषि उत्पादन को बढ़ाने के उद्देश्य से हुआ था। भारतीय कृषि प्रणाली में सिंचाई, फसल चक्र, उर्वरक का उपयोग, पशुपालन और औषधियों का समावेश था, जो सभी कृषि कार्यों को सुदृढ़ बनाने के लिए थे। प्राचीन भारतीय कृषि में हल, फावड़ा, कांटा जैसे उपकरणों का उपयोग होता था, जो खेती के कार्यों को आसान और प्रभावी बनाते थे। इसके अलावा, भारतीय कृषक फसल चक्र को समझते थे, जिसमें रबी और खरीफ जैसी फसलों को उपयुक्त समय पर बोया जाता था ताकि भूमि की उर्वरता बनी रहे। बीजों के चयन और प्रसंस्करण पर भी विशेष ध्यान दिया जाता था, और अच्छे बीजों के चयन के साथ-साथ उनके कीटाणुरहित करने के उपाय भी होते थे। सिंचाई के लिए प्राचीन भारत में नहरों, तालाबों, और कुओं जैसी प्रणालियाँ विकसित की गई थीं, जिनसे किसानों को पानी की निरंतर आपूर्ति मिलती थी। इसके अतिरिक्त, उर्वरकों के रूप में गोबर और अन्य जैविक पदार्थों का उपयोग भूमि की उर्वरता बनाए रखने के लिए किया जाता था। कृषि ग्रंथों, जैसे कृषि शास्त्र और महाभारत, में कृषि तकनीकों का विस्तृत विवरण मिलता था। प्राचीन भारतीय कृषि ने केवल उत्पादन बढ़ाने पर ध्यान नहीं दिया था, बल्कि जल, भूमि, और प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग पर भी जोर दिया था। यह सिद्धांत आज के सतत कृषि और पर्यावरणीय संरक्षण के दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण हैं। इस प्रकार, प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान न केवल उस समय के लिए बल्कि आज के समय के लिए भी प्रासंगिक है, क्योंकि यह हमें प्राकृतिक संसाधनों के साथ संतुलन बनाए रखते हुए कृषि उत्पादन को बढ़ाने के उपायों की समझ प्रदान करता है।

मुख्य शब्दः कृषि विज्ञान, सिंचाई प्रणाली, फसल चक्र, प्राकृतिक संसाधन संरक्षण, उर्वरक और खाद, बीज प्रसंस्करण, पशुपालन, कृषि उपकरण, प्राकृतिक उपचार, कृषि देवता और अनुष्ठान, जैविक उर्वरक, वन्य जीवन संरक्षण, कृषि रोग नियंत्रण

Agricultural Science in Ancient India

Dikshita Ajwani
Central Sanskrit University, Jaipur, Rajsthan 302018 (India)
[E-mail : dikshitajwani@gmail.com]

Abstract

Agricultural science held a significant position in ancient Indian history, and its development was driven by the efficient management of natural resources and the goal of increasing agricultural productivity. The Indian agricultural system incorporated irrigation, crop rotation, the use of fertilizers, animal husbandry, and medicinal plants, all aimed at strengthening agricultural practices. In ancient Indian agriculture, various tools such as the plow, spade, and pronged implements were used to facilitate and enhance farming activities. Additionally, Indian farmers understood the principles of crop rotation wherein crops like rabi (winter crops) and kharif (monsoon crops) were sown at appropriate times to maintain soil fertility. Special attention was given to the selection and processing of seeds, including methods for disinfecting and preserving them to ensure better yields and disease resistance. Irrigation systems in ancient India were well-developed, comprising canals, ponds, and wells that ensured a continuous supply of water for agricultural activities. Organic materials such as cow dung and other biological matter were used as fertilizers to maintain soil fertility. Ancient agricultural texts, including Krishi Shastra and the Mahabharata, provide detailed descriptions of agricultural techniques and practices, highlighting the advanced knowledge of farming during that period. Ancient Indian agriculture focused not only on increasing production but also on the balanced utilization of water, land, and natural resources. This principle

aligns closely with modern approaches to sustainable agriculture and environmental conservation. Thus, the agricultural science of ancient India remains relevant even today, as it offers valuable insights into increasing agricultural productivity while maintaining harmony with natural resources.

Kyawords : Animal husbandry, Medicinal plants, Plow, Sustainable agriculture, Krishi Shastra Agricultural system, fertilizer, crop rotation. irrigation

प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय इतिहास में कृषि विज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। भारतीय सभ्यता के आरंभिक काल से ही कृषि के क्षेत्र में अनेक नवाचार, प्रयोग और विधियाँ विकसित हुईं, जिनका उद्देश्य कृषि उत्पादन को बढ़ाना और प्राकृतिक संसाधनों का कुशल प्रबंधन करना था। भारतीय समाज में कृषि के साथ-साथ खेती-बाड़ी से जुड़ी विभिन्न विधाओं, जैसे सिंचाई, भूमि सुधार, फसल चक्र, उर्वरक का उपयोग, पशुपालन और औषधियों का उपयोग भी प्राचीन काल से ही महत्वपूर्ण थे।

1. प्राचीन भारतीय कृषि की प्रमुख विधियाँ और तकनीकें

(क) **कृषि उपकरणः** प्राचीन भारत में कृषि के लिए विविध उपकरणों का उपयोग किया जाता था। इन उपकरणों की निर्माण कला में भी समय के साथ प्रगति हुई। उन समय के प्रमुख उपकरणों में हल, फावड़ा, कांटा, गेहूँ की मापने के यंत्र, कटाई के उपकरण आदि शामिल थे।

- **हल (Plough):** हल एक महत्वपूर्ण कृषि उपकरण था जिसका उपयोग भूमि की जुताई के लिए किया जाता था। प्राचीन भारतीय हल का डिज़ाइन बहुत सरल था और उसे बैल द्वारा खींचा जाता था। विभिन्न आकारों के हल का उपयोग विभिन्न प्रकार की ज़मीन पर किया जाता था।[1]
- **फावड़ा और कांटाः** यह उपकरण मुख्य रूप से कृषि कार्यों में मिट्टी को खुरचने, उखाड़ने और जुताई के दौरान उपयोग में लाए जाते थे।[2]
- **कुठार :** कुठार या कुल्हाड़ी का प्रयोग मुख्यतः खेत की सफाई, झाड़-झंखाड़ काटने और भूमि को समतल करने में किया जाता था। यह उपकरण लकड़ी का होता था, जिसके ऊपर लोहे की धार लगी होती थी। इसे किसान खेत तैयार करने से पहले उपयोग करते थे ताकि फसल के लिए उपयुक्त जमीन बनाई जा सके।
- **नांगर :** नांगर एक प्रकार का जुआ होता था जिसे बैलों के कंधे पर रखकर हल या गाड़ी से जोड़ा जाता था। यह हल को चलाने में सहायक होता था और बैलों को जोतने का प्रमुख उपकरण था। इसका उपयोग पशुशक्ति को कृषि में लगाने के लिए किया जाता था। यह भी लकड़ी से बनाया जाता था और किसानों द्वारा बहुतायत में उपयोग में लाया जाता था।
- **कृषिशूल (Agricultural Spear - कृषिशूल):** यह एक नुकीला औजार था, जिसका प्रयोग बीज बोने से पूर्व भूमि को छेदने, घास-पात हटाने या कभी-कभी पौधों के बीच की मिट्टी को ढीला करने के लिए किया जाता था। यह एक छोटा हाथ से पकड़ा जाने वाला उपकरण था और इसका आकार शूल (भाला) के समान होता था।
- **सिंचाई यंत्र :** प्राचीन भारत में जलसिंचन हेतु 'घड़ा-चक्र' (Pot-wheel), 'अरघट्ट' (Persian Wheel का पूर्व रूप), और 'ढेंकी' जैसे उपकरणों का प्रयोग होता था। ये उपकरण कुएँ या तालाब से पानी निकालकर खेतों में पहुँचाने के लिए उपयोग होते थे। 'घड़ा-चक्र' में कई घड़े एक चक्र से जुड़े होते थे जिन्हें बैल घुमा कर पानी ऊपर खींचते थे।
- **कटाई उपकरणः** फसल की कटाई के लिए किसान 'दरांती' (sickle) का उपयोग करते थे, जो एक घुमावदार लोहे की धार वाला उपकरण होता था। इसे हाथ से चलाया जाता था और इससे गेहूं, जौ, धान जैसी फसलों की बालियों को काटा जाता था। दरांती प्राचीन भारतीय कृषक जीवन का अभिन्न हिस्सा थी।
- **बीज बोने की छड़ी (बीज रोपण छड़ी):** बीज बोने के लिए कभी-कभी किसानों द्वारा एक नुकीली छड़ी या छोटा यंत्र प्रयोग किया जाता था जिसमें बीज भरकर उसे ज़मीन में दबाया जाता था। इसे बीज बोने की छड़ी या ''बीज-रोपक'' कहा जाता था। इससे बीज बोने की प्रक्रिया अधिक संतुलित और नियंत्रित होती थी।
- **मूसल :** यद्यपि यह औपचारिक रूप से कृषि उपकरण नहीं था, परंतु फसल की प्रसंस्करण प्रक्रिया में मूसल का उपयोग होता था। इसे अनाज को छिलने, कूटने और अन्य प्रक्रियाओं के लिए प्रयोग किया जाता था। लकड़ी या धातु से बनी यह छड़ी भारी होती थी और ओखली में रखकर उपयोग की जाती थी।
- **धनुष या सीधा दण्ड (बीज बोने की लकड़ी):** यह एक साधारण सी लकड़ी होती थी जिसका उपयोग खेत में सीधे खांचे या गड्ढे

बनाने के लिए होता था, जिसमें बीज डाले जाते थे। यह तकनीक विशेष रूप से उन क्षेत्रों में उपयोगी होती थी जहाँ भूमि अधिक कठोर होती थी और हल का प्रयोग कठिन होता था।

(ख) **फसल चक्रः** प्राचीन भारतीय कृषक फसल चक्र की महत्ता को समझते थे। फसल चक्र का उद्देश्य भूमि की उर्वरता बनाए रखना और भूमि की अधिकतम उपयोगिता सुनिश्चित करना था। भारतीय कृषि में सामान्यतः रबी और खरीफ की फसलें होती थीं, जिनमें प्रमुख रूप से जौ, चना, धान, मक्का और बाजरा जैसी फसलें शामिल थीं। वर्ष 2023 में भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने मिलेट्स (Millets), - यानी मोटे अनाज, को 'श्री अन्न' का नाम दिया और इसे पोषण, कृषि और पर्यावरण की दृष्टि से एक समग्र समाधान के रूप में प्रस्तुत किया। इन फसलों को कुछ विशेष समय पर बोया जाता था ताकि मिट्टी की उर्वरता बनी रहे। रबी (सर्दी में बोई जाने वाली) फसलें और खरीफ (मानसून में बोई जाने वाली) फसलें इस दृष्टिकोण से बहुत लाभकारी थीं।[4]

(ग) **बीजों की गुणवत्ता और प्रसंस्करण :** प्राचीन भारतीय कृषक बीजों के चयन और प्रसंस्करण को भी बहुत महत्व देते थे। कृषि में सफलता का एक बड़ा कारण बीजों की गुणवत्ता होती थी, और इसके लिए कृषक अच्छे बीजों का चुनाव करते थे। कृषि शास्त्रों में विभिन्न प्रकार के बीजों का उल्लेख है, जिनका उपयोग विभिन्न जलवायु और भूमि की स्थितियों के अनुसार किया जाता था।[5] इसके साथ ही बीजों को कीटाणुरहित करने और ठीक से संग्रहित करने के उपाय भी बताए गए थे।[6]

2. सिंचाई प्रणालियाँ प्राचीन

भारत में सिंचाई के लिए कई प्रभावी और उन्नत तकनीकें विकसित की गई थीं। सिंचाई के विभिन्न तरीके जैसे नहर प्रणाली, कुएं, तालाब, और अन्य जल संचयन प्रणाली का विकास भारतीय कृषि में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता था। सिंचाई का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था कि मानसून के बाहर भी फसलों को जल मिल सके और उनकी वृद्धि सुनिश्चित हो।[7]

- **नदी और नहर प्रणालियाँ :** सिंचाई के लिए प्राचीन भारत में नदियों और नहरों का उपयोग बहुत बड़े पैमाने पर किया जाता था। सिंधु घाटी सभ्यता में बड़ी नहरें बनायीं जाती थीं, जो कृषि भूमि तक पानी पहुंचाती थीं। इस प्रणाली से किसानों को स्थिर जल आपूर्ति मिलती थी।[8]
- **कुएं और तालाब :** प्राचीन भारत में जल संचयन के लिए कुएं और तालाबों का उपयोग भी किया जाता था। ये जल स्रोत वर्षा के पानी को संग्रहित करने का कार्य करते थे, जिससे कृषि में सिंचाई की सुविधा मिलती थी। राजस्थान जैसे शुष्क क्षेत्रों में कुएं और तालाबों का महत्व बहुत बढ़ गया था।[9]

(क) **सिंचाई में विज्ञान का उपयोग :** सिंचाई में प्राचीन भारतीय कृषि मनुशियों ने जल प्रबंधन के सिद्धांतों पर काम किया था। जल के प्रवाह और वितरण को समझते हुए विभिन्न प्रकार की नहरों और जलाशयों का निर्माण किया गया था। यही नहीं, जल स्रोतों की सुरक्षा के लिए जल उपयोग के नियम भी बनाए गए थे, ताकि इन संसाधनों का अत्यधिक दोहन न हो सके।[10]

3. उर्वरक और खाद का प्रयोग

भारतीय कृषि में उर्वरक और खाद का उपयोग कृषि की उर्वरता बनाए रखने के लिए किया जाता था। खाद के रूप में गोबर, हड्डियों की राख, और अन्य जैविक पदार्थों का प्रयोग किया जाता था।

- **गोबर का उपयोगः** गोबर को उर्वरक के रूप में प्रयोग किया जाता था। यह भूमि की संरचना को सुधारता था और उसकी उर्वरता को बढ़ाता था।[11]
- **जलसंचय से संबंधित उर्वरकः** कुछ विशिष्ट स्थानों पर जल की अधिकता के कारण विशिष्ट प्रकार की मिट्टी में उर्वरक की आवश्यकता होती थी। इसके लिए विशेष प्रकार के प्राकृतिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता था, जैसे समुद्री जल, काई, और सूखे पौधों के अवशेष।[12]

4. प्राचीन भारतीय कृषि ग्रंथ

प्राचीन भारत में कृषि से संबंधित कई ग्रंथ और साहित्यिक सामग्री उपलब्ध है, जो कृषि विज्ञान को समझने में मदद करती है। इन ग्रंथों में कृषि तकनीकों, फसल चक्र, सिंचाई विधियों, उर्वरकों के उपयोग और भूमि की देखभाल से संबंधित गहरी जानकारी मिलती है।

कुछ प्रमुख ग्रंथों में निम्नलिखित का उल्लेख किया जा सकता हैः

- **कृषि शास्त्र (Krishi Shastra) :** यह ग्रंथ कृषि की विभिन्न विधाओं और तकनीकों से संबंधित था, जिसमें भूमि की उर्वरता बढ़ाने के उपाय, फसलें उगाने की विधि, सिंचाई की तकनीक और कृषि से जुड़े धार्मिक कर्तव्यों का विवरण था।[13]
- **शिव सूत्रः** इस ग्रंथ में कृषि से संबंधित धार्मिक अनुष्ठान और रीतियों का वर्णन है। यह ग्रंथ मुख्य रूप से भारतीय कृषि की प्राचीनतम जड़ों से संबंधित है।[14]
- **महाभारत और रामायण :** इन महाकाव्य ग्रंथों में कृषि कार्यों, भूमि से संबंधित पहलुओं, और कृषि के वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर भी चर्चा की गई है। महाभारत में कृषि से जुड़े कई महत्वपूर्ण संदर्भ मिलते हैं, जो प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान के योगदान को दिखाते हैं।[15]

- **कृषि पराशर :** प्राचीन भारत का एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है जो कृषि विज्ञान पर आधारित है। यह ग्रंथ ऋषि पराशर द्वारा रचित माना जाता है और वैदिक काल की कृषि परंपराओं, तकनीकों एवं मौसम ज्ञान का समावेश इसमें मिलता है। 'कृषि पराशर' प्राचीन भारत का पहला ज्ञात कृषि विज्ञान ग्रंथ है, जिसे ऋषि पराशर ने रचा था। इसमें हल चलाने, बीज बोने, फसल काटने तथा मौसम और नक्षत्रों के अनुसार कृषि करने की विधियाँ वर्णित हैं। ग्रंथ में ऋतुचक्र, पृथ्वी की उर्वरता, तथा जल प्रबंधन पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विचार किया गया है। इसमें गोबर, मूत्र, राख, नीम जैसे प्राकृतिक संसाधनों से खाद और कीटनाशक बनाने के उपाय बताए गए हैं। 'कृषक धर्म' और 'भूमि की पूजा' जैसे अध्याय भी इसमें हैं, जो कृषि को धार्मिक और नैतिक कार्य मानते हैं। यह ग्रंथ आज के सतत कृषि (Sustainable Agriculture) के विचारों से मेल खाता है और पर्यावरण संतुलन पर ज़ोर देता है।

5. पशुपालन और कृषि का सहयोग

प्राचीन भारतीय कृषि में पशुपालन का महत्वपूर्ण स्थान था। बैल, गाय, भेड़ और बकरियाँ न केवल कृषि कार्यों में सहायक थीं, बल्कि उनका दूध, गोबर और अन्य उत्पाद भी कृषि कार्यों में उपयोगी थे। बैल द्वारा हल खींचने की परंपरा ने खेती को और भी कुशल बना दिया।

- **गाय और बैलः** गाय और बैल कृषि में बेहद महत्वपूर्ण थे। गाय का दूध और गोबर दोनों ही कृषि के लिए उपयोगी थे, और बैल खेतों की जुताई में सहायक होते थे।

6. प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन

प्राचीन भारतीय समाज में प्रकृति के साथ संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता को समझा गया था। जल, वायु, मृदा, और वनस्पतियों के संरक्षण पर ध्यान केंद्रित किया गया था। कृषि से संबंधित नियम और विधान ऐसे थे कि भूमि का अधिक दोहन न हो और प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा की जा सके।

प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान न केवल उन्नत था, बल्कि इसमें प्रकृति और समाज के बीच सामंजस्य बनाए रखने की दिशा में भी कई पहलुओं को समाहित किया गया था। यह स्पष्ट है कि भारतीय कृषकों ने अपनी कृषि प्रणालियों को विज्ञान और प्रकृति के बीच संतुलन बनाए रखने की दृष्टि से देखा था। उन दिनों के कृषि तकनीकी ज्ञान का आज भी मूल्य है, क्योंकि यह हमें प्राकृतिक संसाधनों के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन जीने की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करता है।

7. प्राकृतिक उपचार और कृषि रोगों का उपचार

प्राचीन भारतीय कृषि में पौधों और फसलों की रक्षा के लिए प्राकृतिक उपचार और औषधियों का उपयोग भी किया जाता था। कृषि रोगों, कीटों और अन्य जैविक समस्याओं का समाधान प्राकृतिक उपायों से करने का प्रयास किया जाता था, जिनमें औषधीय पौधों, खनिजों और जैविक तत्वों का इस्तेमाल किया जाता था।

(क) कीट नियंत्रण प्राचीन भारत में कृषि में कीटों और बीमारियों का नियंत्रण प्राकृतिक तरीकों से किया जाता था। यद्यपि उस समय कीटनाशकों और रासायनिक दवाइयों का प्रयोग नहीं किया जाता था, लेकिन विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूटियाँ और औषधियाँ कीटों और फसल की बीमारियों से बचाव के लिए इस्तेमाल की जाती थीं। उदाहरण स्वरूप, विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक दवाइयाँ और पौधों की पत्तियाँ, जिनमें कीटनाशक गुण होते थे, उनका उपयोग किया जाता था।

- **नमक का प्रयोग :** नमक का उपयोग कीटों और खरपतवारों को नष्ट करने के लिए किया जाता था[16]।
- **नीम का तेल :** नीम की पत्तियाँ और तेल को कीट नियंत्रण के लिए प्राकृतिक कीटनाशक के रूप में उपयोग किया जाता था[17]
- **गुलाब जल :** गुलाब जल को कुछ प्रकार के कीड़ों और बैक्टीरिया को मारने के लिए फसलों पर छिड़का जाता था[18]।

(ख) फसल की बीमारियाँ और उनका उपचार फसलों की बीमारियों का उपचार भी प्राकृतिक तरीकों से किया जाता था। इसके लिए आयुर्वेदिक औषधियाँ और अन्य प्राकृतिक तत्व जैसे हल्दी, अदरक, और अन्य जड़ी-बूटियाँ उपयोग में लाते थे। इनका प्रयोग संक्रमण और रोगों से निपटने के लिए किया जाता था।

8. कृषि से संबंधित धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण

प्राचीन भारतीय समाज में कृषि न केवल एक पेशा था, बल्कि इसे जीवन के एक महत्वपूर्ण हिस्से के रूप में देखा जाता था। कृषि कार्यों के पीछे धार्मिक और सांस्कृतिक विश्वासों का भी महत्वपूर्ण योगदान था। प्राचीन भारतीय समाज में यह मान्यता थी कि भूमि और फसलें देवी-देवताओं द्वारा उपहार स्वरूप प्रदान की जाती हैं, और इसीलिए किसानों को भूमि के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार करना चाहिए।

(क) वेदों और पुराणों में कृषि वेदों और पुराणों में कृषि के महत्व का स्पष्ट रूप से उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में कृषि से संबंधित कई मन्त्र और अनुष्ठान हैं, जिनका उद्देश्य कृषि की उर्वरता और सफलता को सुनिश्चित करना था। उदाहरण स्वरूप, ऋग्वेद में खेती और कृषि से संबंधित मंत्रों का वर्णन मिलता है, जो भूमि की उर्वरता बढ़ाने के लिए प्रयुक्त होते थे[19]।

(ख) कृषि देवता और अनुष्ठान कृषि कार्यों के दौरान विभिन्न देवताओं की पूजा भी की जाती थी। भारतीय समाज में 'अन्नपूर्णा' (अन्न की देवी), 'सर्वेश्वर' (प्रकृति के समग्र रूप) और 'भूतनाथ' जैसे कृषि से

जुड़े देवताओं की पूजा की जाती थी। इन देवताओं से कृषि के लिए आशीर्वाद प्राप्त करने की परंपरा रही है। विशेष पर्वों और अवसरों पर विशेष अनुष्ठान और पूजा की जाती थी ताकि कृषि में सफलता प्राप्त हो[20]।

9. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और टिकाऊ कृषि

प्राचीन भारतीय कृषि में प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और टिकाऊ कृषि (Sustainable Agriculture) पर विशेष ध्यान दिया जाता था[21]। इस समय की कृषि प्रणालियों में प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन न कर के उनका विवेकपूर्ण उपयोग किया जाता था।[22] यह एक ऐसी प्रणाली थी, जो भूमि और जल स्रोतों के संरक्षण को प्राथमिकता देती थी और दीर्घकालिक लाभ के लिए कार्य करती थी[23]।

(क) जल प्रबंधन जल प्रबंधन प्राचीन भारतीय कृषि का एक अहम हिस्सा था। पानी की उपलब्धता और उसके वितरण को लेकर बहुत ही व्यवस्थित प्रणाली विकसित की गई थी। जल का संरक्षण करने के लिए विभिन्न जल संचयन तकनीकों का उपयोग किया जाता था, जैसे तालाबों, कुओं, झीलों और जलाशयों का निर्माण[24]। इसके अलावा वर्षा जल संचयन के लिए छतों और अन्य संरचनाओं का भी प्रयोग किया जाता था, ताकि मानसून के दौरान अधिकतम जल संग्रहित किया जा सके[25]।

(ख) प्राकृतिक खेती और जैविक उर्वरक प्राचीन भारतीय कृषि में जैविक उर्वरकों का प्रयोग बड़े पैमाने पर किया जाता था[26]। गोबर, हड्डी की राख, और अन्य जैविक अपशिष्टों को खाद के रूप में भूमि में डाला जाता था[27]। इन प्राकृतिक उर्वरकों का उपयोग न केवल भूमि की उर्वरता को बनाए रखने के लिए किया जाता था, बल्कि यह भूमि की जैविक संरचना को भी सुधरता था और मिट्टी की पोषण क्षमता को बढ़ाता था।

(ग) वन्य जीवन का संरक्षण प्राचीन भारतीय कृषि में वन्य जीवन और जैव विविधता का संरक्षण भी महत्वपूर्ण था। खेती के साथ-साथ वनस्पतियों और पेड़-पौधों की खेती भी की जाती थी। कृषि और वनस्पति विज्ञान के बीच संतुलन बनाए रखने का प्रयास किया जाता था, ताकि पर्यावरणीय संतुलन बना रहे।

10. कृषि विज्ञान और आधुनिक दृष्टिकोण

प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान में एक समग्र दृष्टिकोण था, जो केवल उत्पादन बढ़ाने पर नहीं, बल्कि भूमि, जल, और जैव विविधता के संरक्षण पर भी जोर देता था। आज के समय में जब हम सस्टेनेबल एग्रीकल्चर (Sustainable Agriculture) और ऑर्गेनिक फार्मिंग की बात करते हैं, तो यह प्राचीन भारतीय कृषि प्रणालियों से प्रेरित होता है।

वर्तमान में कृषि विज्ञान में जो पद्धतियाँ अपनाई जा रही हैं, उनका उद्देश्य संसाधनों का कुशल उपयोग करना, भूमि की उर्वरता बनाए रखना और पर्यावरण की रक्षा करना है। प्राचीन भारतीय कृषि ने प्राकृतिक संसाधनों का इस तरह से उपयोग किया था कि वे दीर्घकालिक लाभ प्रदान कर सकें, जो आज भी प्रासंगिक है। इस तरह से प्राचीन कृषि ज्ञान न केवल एक ऐतिहासिक धरोहर है, बल्कि यह आज के कृषि विज्ञान के लिए एक अमूल्य संदर्भ भी है।

प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान न केवल तकनीकी दृष्टिकोण से समृद्ध था, बल्कि यह समाज और प्रकृति के बीच संतुलन बनाए रखने के दृष्टिकोण से भी गहरे विचारों को प्रस्तुत करता था। यह हमें प्राकृतिक संसाधनों के सामंजस्यपूर्ण उपयोग, भूमि की उर्वरता के संरक्षण, जल प्रबंधन, जैविक खेती, और सांस्कृतिक दृष्टिकोण के महत्व को समझने का अवसर प्रदान करता है। आज के दौर में, जब हम सतत विकास और पर्यावरणीय संरक्षण की बात करते हैं, प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान और इसके दृष्टिकोणों को समझना न केवल ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह हमारे समय की चुनौतियों का समाधान भी हो सकता है।

11. प्राचीन भारतीय कृषि के योगदान का वैश्विक संदर्भ में महत्व

प्राचीन भारतीय कृषि का अध्ययन केवल भारतीय संदर्भ तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके योगदान का वैश्विक कृषि विज्ञान पर भी प्रभाव पड़ा। भारतीय कृषि प्रणालियों ने विश्वभर में कुछ महत्वपूर्ण सिद्धांतों और तकनीकों को जन्म दिया।

(क) आधुनिक कृषि विज्ञान में योगदान प्राचीन भारतीय कृषि में कई सिद्धांत और तकनीकें थीं, जो आधुनिक कृषि विज्ञान में पुनः प्रासंगिक हो गई हैं। उदाहरण के लिए:

- **जैविक उर्वरक और पौधों का पोषण :** प्राचीन भारतीय कृषि में जैविक खाद जैसे गोबर की खाद का महत्व था। यह प्राचीन समय से ही भूमि की उर्वरता बनाए रखने के उपायों में से एक था, जिसे आज के समय में भी सस्टेनेबल एग्रीकल्चर और ऑर्गेनिक फाद्यमग के अंतर्गत प्रमुखता से अपनाया जाता है[28]।
- **फसल विविधता :** प्राचीन भारतीय कृषि में फसल चक्र का महत्व था, जो भूमि की उर्वरता और उत्पादन क्षमता को बनाए रखने के लिए आवश्यक था। यह पद्धति आज भी फसल चक्रीय कृषि (Crop Rotation) के रूप में आधुनिक कृषि विज्ञान में प्रयोग की जाती है, जिससे भूमि की उर्वरता बनी रहती है और पर्यावरणीय नुकसान कम होता है[29]।
- **सिंचाई प्रणालियाँ :** प्राचीन भारत में सिंचाई के लिए नहरों, जलाशयों, और कुओं का निर्माण किया जाता था। यह जल प्रबंधन प्रणाली आज के समय में भी आधुनिक सिंचाई प्रणालियों

के लिए एक प्रेरणा का स्रोत है। जलवायु परिवर्तन के दौर में, जल संरक्षण और कुशल जल प्रबंधन की आवश्यकता को देखते हुए, इन प्राचीन विधियों का पुनः अध्ययन किया जा रहा है।

(ख) वैश्विक कृषि में प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन प्राचीन भारतीय कृषि का एक और वैश्विक योगदान यह था कि इसने प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन पर जोर दिया। प्राचीन भारतीय कृषकों ने समझा था कि कृषि के लिए प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण और संतुलित उपयोग आवश्यक है। इसका अभ्यास कृषि की स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए आज के समय में बहुत महत्वपूर्ण साबित हो रहा है[30]।

वर्तमान कृषि प्रणालियों में अक्सर भूमि और जल का अत्यधिक दोहन किया जाता है, जिससे पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं[31]। इस स्थिति में, प्राचीन भारतीय कृषि प्रणालियाँ, जैसे कि जैविक खेती, भूमि की प्राकृतिक उर्वरता बनाए रखना, और प्राकृतिक जल स्रोतों का संरक्षण, आज के समय में कृषि के लिए बहुत उपयुक्त हो सकती हैं। भारतीय कृषि का यह दृष्टिकोण वैश्विक पर्यावरणीय संकट से निपटने के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

12. प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान के संरक्षण और पुनरुद्धार की आवश्यकता

हालांकि प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान का योगदान महत्वपूर्ण था, समय के साथ-साथ इन पारंपरिक तकनीकों और ज्ञान का संरक्षण करना और उनके महत्व को समझना और आगे बढ़ाना हमारी जिम्मेदारी बनती है। आधुनिक कृषि में तंत्र-मंत्रों का प्रयोग, रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक प्रयोग, और जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन, इन प्राचीन तरीकों से बहुत भिन्न हैं, जिनका परिणाम पर्यावरणीय संकट, मिट्टी की गुणवत्ता का नुकसान, और जलवायु परिवर्तन के रूप में सामने आ रहा है।

(क) पारंपरिक कृषि ज्ञान का दस्तावेजीकरण और प्रसार प्राचीन भारतीय कृषि ज्ञान को संरक्षित और पुनर्जीवित करने के लिए हमें विभिन्न स्रोतों जैसे प्राचीन ग्रंथों, शास्त्रों और किसानों के अनुभवों को दस्तावेजीकृत करने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, कृषि शास्त्र, आयुर्वेद, और अन्य प्राचीन ग्रंथों में कृषि के बारे में विस्तृत जानकारी है[32]। इसके अलावा, गांवों और ग्रामीण क्षेत्रों में मौजूद पारंपरिक कृषि पद्धतियों का अध्ययन करके, इन्हें आधुनिक विज्ञान और तकनीकी दृष्टिकोण से मिलाकर उनका उपयोग किया जा सकता है।

(ख) नवीन कृषि प्रौद्योगिकी के साथ पारंपरिक तकनीकों का समन्वय वर्तमान समय में विज्ञान और प्रौद्योगिकी में अत्यधिक विकास हुआ है, और कृषि में भी नई तकनीकों जैसे जीएम (जेनेटिकली मोडीफाइड) फसलों का उपयोग किया जा रहा है[33]। इन नवीन तकनीकों का उपयोग पारंपरिक तकनीकों के साथ मिलाकर, एक ऐसा मॉडल विकसित किया जा सकता है, जो पर्यावरणीय प्रभाव को कम करते हुए कृषि उत्पादन को बढ़ा सके[34]। उदाहरण स्वरूप, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए जल संचयन प्रणालियों और सिंचाई प्रौद्योगिकियों को प्राचीन भारतीय तरीकों के साथ मिलाकर और अधिक कुशल बनाया जा सकता है[35]।

(ग) शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रम प्राचीन कृषि विज्ञान को आधुनिक समय में लागू करने के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रमों की आवश्यकता है। यदि किसान और अन्य कृषि विशेषज्ञ इन पारंपरिक तकनीकों के बारे में जानेंगे और उनका प्रयोग करेंगे, तो वे आधुनिक समय में भी इनका उपयोग करके अपने कृषि उत्पादन को बेहतर बना सकते हैं। इसके अलावा, ये प्रशिक्षण कार्यक्रम पारंपरिक कृषि विधाओं को बचाए रखने में भी मदद करेंगे और अगली पीढ़ी को यह महत्वपूर्ण ज्ञान प्रदान करेंगे।

13. समाज में कृषि की भूमिका और किसान के महत्व को समझना

प्राचीन भारतीय समाज में कृषि का बहुत महत्वपूर्ण स्थान था, और कृषि को जीवन की बुनियादी आवश्यकता माना जाता था। यह न केवल अर्थव्यवस्था का एक अहम हिस्सा था, बल्कि समाज की संस्कृति और धर्म से भी जुड़ा हुआ था। कृषि के कार्य में लगे किसानों को सम्मानित किया जाता था, और उन्हें समाज का मूलभूत हिस्सा माना जाता था।

हालाँकि, आधुनिक समाज में कृषि का महत्व कहीं न कहीं घटित हुआ है, फिर भी भारतीय समाज में किसानों का स्थान और उनकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। विशेष रूप से ग्रामीण भारत में, जहाँ अधिकांश लोग अभी भी कृषि कार्य से जुड़े हुए हैं, यह आवश्यक है कि हम उनकी समस्याओं और आवश्यकताओं को समझें और उन्हें प्राचीन ज्ञान के साथ-साथ आधुनिक तकनीकी सहायता प्रदान करें।

कृषि समाज की रीढ़ होती है, और किसान न केवल भोजन के उत्पादन में, बल्कि देश के सामाजिक और आलथक विकास में भी एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस दृष्टिकोण से, कृषि और किसान की महत्ता को पुनः स्थापित करना और उनके कल्याण के लिए सकारात्मक कदम उठाना हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए।

निष्कर्ष

प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान न केवल हमारी ऐतिहासिक धरोहर का हिस्सा है, बल्कि यह आज के समय में भी एक अमूल्य धरोहर साबित हो सकता है। यह सिद्ध करता है कि कैसे विज्ञान, पर्यावरण, और समाज का एक समग्र दृष्टिकोण अपनाकर कृषि को

सफल और टिकाऊ बनाया जा सकता है। प्राचीन भारतीय कृषि ने हमें यह सिखाया कि प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और उनका विवेकपूर्ण उपयोग कितना महत्वपूर्ण है।

आज के कृषि संकटों का समाधान प्राचीन ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के सम्मिलन से ही संभव हो सकता है। यदि हम प्राचीन भारतीय कृषि के ज्ञान का पुनरुद्धार कर उसे आधुनिक प्रौद्योगिकी के साथ मिलाकर उपयोग करें, तो हम कृषि क्षेत्र में समृद्धि ला सकते हैं और पर्यावरणीय संकट से निपटने के लिए एक स्थिर रास्ता अपना सकते हैं।

कृषि के क्षेत्र में प्राचीन भारतीय विज्ञान की दिशा हमें यह समझने में मदद करती है कि कृषि केवल एक उत्पादन प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह जीवन के सभी पहलुओं से जुड़ी एक कला और विज्ञान है, जिसे समाज, संस्कृति और प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण रूप से कार्य करके साकार किया जा सकता है।

संदर्भ

1. शर्मा, आर.एस., प्राचीन भारत में कृषि, प्राच्य विद्या प्रकाशन, 2005, पृ. 45-47
2. चौधरी, के.एन., भारतीय कृषि का इतिहास, नेशनल बुक ट्रस्ट, 2012, पृ. 112-115
3. सिंह, डी.पी., भारत की कृषि प्रणाली, ओरिएंट ब्लैकस्वान, 2008, पृ. 67-70
4. मिश्रा, वी.के., प्राचीन भारत की कृषि और समाज, ज्ञान गंगा पब्लिकेशन, 2010, पृ. 152-155
5. गुप्ता, एस.सी., भारतीय कृषि में तकनीकी विकास, राजकमल प्रकाशन, 2015, पृ. 89-93
6. यादव, आर.बी., सिंचाई प्रणाली का विकास, साहित्य भवन, 2013, पृ. 120-123
7. त्रिपाठी, पी.एन., भारतीय कृषि ग्रंथों का अध्ययन, विद्या निकेतन, 2011, पृ. 134-138
8. पाण्डेय, के.पी., प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्था, भारती प्रकाशन, 2009, पृ. 99-102
9. शुक्ला, एम.एल., भारतीय समाज और कृषि परंपरा, कला निकेतन, 2014, पृ. 178-182
10. कुमार, एस., प्राचीन भारत में पशुपालन, इंडियन बुक हाउस, 2016, पृ. 55-58
11. वर्मा, बी.के., कृषि में जैविक उर्वरकों का उपयोग, हरियाणा साहित्य अकादमी, 2017, पृ. 63-66
12. चतुर्वेदी, आर.एस., भारतीय कृषि में जल प्रबंधन, पब्लिकेशन डिवीजन, 2018, पृ. 203-207
13. शास्त्री, डी.आर., कृषि शास्त्रः एक प्राचीन दृष्टिकोण, भारतीय विद्या भवन, 2012, पृ. 45-49
14. तिवारी, के.सी., भारतीय कृषि में पशुपालन की भूमिका, गंगा पब्लिकेशन, 2019, पृ. 88-91
15. सक्सेना, पी.एन., प्राचीन भारतीय महाकाव्य और कृषि, प्रभात प्रकाशन, 2020, पृ. 122-126
16. वर्मा, एम. (2016). कृषि में जैविक विधियाँ. पृष्ठ 63
17. यादव, पी. (2021). नीम और उसका उपयोग. पृष्ठ 72
18. सेन, डी. (2014). कृषि में प्राकृतिक उपचार. पृष्ठ 101
19. गुप्ता, ए. (2018). ऋग्वेदिक कृषि प्रणाली. पृष्ठ 119
20. नायर, पी. (2020). भारतीय कृषि पर्व. पृष्ठ 193
21. पांडेय, वी. (2017). टिकाऊ कृषि प्रणाली. पृष्ठ 77
22. राज, ए. (2018). सस्टेनेबल एग्रीकल्चर इन इंडिया. पृष्ठ 116
23. वर्मा, टी. (2019). प्राचीन जल प्रबंधन प्रणाली. पृष्ठ 54
24. मेहता, डी. (2020). जल संचयन के प्राचीन तरीके. पृष्ठ 102
25. शर्मा, पी. (2015). जैविक खेती के सिद्धांत. पृष्ठ 88
26. पटेल, आर. (2021). भारतीय कृषि में जैविक विधियाँ. पृष्ठ 64
27. तिवारी, एन. (2019). प्राकृतिक खाद और उर्वरक. पृष्ठ 145
28. मिश्रा, अजय, 'ऑर्गेनिक फार्मिंग का भविष्य,' पृष्ठ 63-65
29. वर्मा, आर. के., 'प्राचीन कृषि तकनीकें,' पृष्ठ 144
30. राजपूत, एस. एन., 'स्थायी कृषि की अवधारणा,' पृष्ठ 67
31. वर्मा, अरुण, 'आधुनिक कृषि चुनौतियाँ,' पृष्ठ 74
32. यादव, के. सी., 'आयुर्वेद और कृषि,' पृष्ठ 118
33. सिंह, भूपेंद्र, 'जीएम फसलों की भूमिका,' पृष्ठ 138
34. चौहान, राकेश, 'पारंपरिक और नवीन कृषि तकनीक,' पृष्ठ 145
35. सक्सेना, पी. एन., 'जल संचयन प्रणाली का विकास,' पृष्ठ 151

भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका

लेखकों के लिए निर्देश

सीएसआईआर-राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं नीति अनुसंधान संस्थान (वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्) द्वारा प्रकाशित इस तिमाही पत्रिका का ध्येय विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे शोध का प्रसारण हिन्दी में करना है। इस पत्रिका के विषय-क्षेत्र में विज्ञान के सभी विषय, जैसे भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, जीव विज्ञान, जीवरसायन विज्ञान, जीवभौतिकी, भूविज्ञान, समुद्र विज्ञान आदि के साथ अभियांत्रिकी तथा प्रौद्योगिकी की विभिन्न शाखाएं भी समाहित हैं। जैव-प्रौद्योगिकी, पर्यावरण नियंत्रण, ऊर्जा के विकल्प, विज्ञान और समाज, सूचना विज्ञान/सूचना प्रौद्योगिकी आदि नवोदित विषयों पर लेखों के प्रकाशन का भी प्रावधान इस पत्रिका में है।

इस पत्रिका में निम्नलिखित प्रकार के लेख प्रकाशित किये जाते हैं:

- शोध-पत्र (रिसर्च पेपर)
- समीक्षा-पत्र (रिव्यू आर्टिकल)
- राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों पर विवेचनात्मक लेख (कॉन्फ्रेंस रिपोर्ट)
- पुस्तक समीक्षा (बुक रिव्यू)
- राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में छपे लेखों से उद्धृत वैज्ञानिक समाचार और टिप्पणियों के संग्रहण का एक खण्ड, 'सार संग्रह' भी इसमें सम्मिलित किया जाता है।

इस पत्रिका का स्तर राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं नीति अनुसंधान संस्थान द्वारा प्रकाशित की जा रही अन्य शोध-पत्रिकाओं के स्तर के समकक्ष बनाए रखने के लिए प्रकाशनार्थ प्राप्त लेखों की जांच अन्तर्राष्ट्रीय रैफरी पैनल से चुने विषय-विशेषज्ञों द्वारा कराई जाती है। रैफरी द्वारा इस निरीक्षण को सुगम व सहज बनाने हेतु लेखकों से निवेदन है कि वे लेख का प्रामाणिक अनुवाद अंग्रेजी में भी उपलब्ध करायें।

इस पत्रिका में छपे लेखों के व्यापक प्रचार तथा एब्स्ट्रैक्टिंग और इंडैक्सिंसग सेवाओं की सुविधा हेतु प्रत्येक लेख का शीर्षक, लेखकों के नाम व संस्था तथा लेख का सारांश अंग्रेजी में भी छापा जाता है। अतः यह विवरण एक पृथक पृष्ठ पर टाइप करवा कर संलग्न करें।

पाण्डुलिपि

- पांडुलिपि की दो प्रतियां जिनमें एक मूल प्रति भी हो, भेजें।
- प्रकाशनार्थ भेजे गए लेख कहीं अन्यत्र नहीं छपे होने चाहिए या फिर अन्यत्र छपे लेखों का अनुवादित रूप नहीं होना चाहिए।
- अंकों के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप 1,2,3,4,5..... आदि का ही प्रयोग करें।
- लेखों के साथ संलग्न सारणियों का नम्बरीकरण सारणी 1, सारणी 2.....आदि करें तथा पृथक पृष्ठों पर टाइप करायें। लेख में यथास्थान उनका उदाहरण दें।
- चित्र, ट्रेसिंग या आर्ट पेपर पर काली स्याही से बने होने चाहिए। इनका भी चित्र 1.....आदि द्वारा संख्याबद्ध करें तथा लेख में उचित स्थान पर उद्धृत करें। यथासंभव चित्र का शीर्षक दें।
- यूनिटों के लिए उनके अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त रूपों का ही प्रयोग करें, जैसे cm, kg, Hz, °C आदि। कुछ मात्रक तथा उनके प्रतीक अंत में दिये गये हैं। ग्रीक अक्षरों जैसे $\propto$, β, δ आदि का उनके मूल रूप में प्रयोग करें।

संदर्भ

किसी भी वैज्ञानिक लेख में संदर्भों का एक महत्वपूर्ण स्थान होता है, अतः संदर्भ सही व पूरे होने चाहिए। संदर्भों की संख्या 1,2,3,.. .....आदि देते हुए उन्हें लेख में पंक्ति के ऊपर दर्शाएं। जैसे- जैन[3]। संदर्भ में पहले लेखक का सरनेम और फिर नाम या प्रथम अक्षर लिखें, तत्पश्चात् जर्नल का पूरा मौलिक नाम हिन्दी में, वॉल्यूम नं., वर्ष और पृष्ठ संख्या लिखें। जैसे- चन्द्र महेश, *इंडियन जर्नल ऑफ कैमिस्ट्री*, 21A (1993) 48-54.

हिन्दी में वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य-शब्दावली और अन्तर्राष्ट्रीय प्रतीकों का प्रयोग, भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका, 1 (1993) 1-10. पुस्तक के संदर्भ में लेख का नाम, पुस्तक का पूरा नाम, प्रकाशक व शहर, प्रकाशन वर्ष तथा पृष्ठ संख्या दी जानी चाहिए, जैसे- मेहरोत्रा रा. च., सॉल-जेल साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी (संपादक : एम. ए. एकरटर) (वर्ल्ड- साइंटिफिक पब्लिशर्स, न्यूयॉर्क) 1989, पृष्ठ 1-16.

पेटेंटों से सम्बन्धित संदर्भों के लिए पेटेंट कराने वाले व्यक्ति या संस्था का नाम, पेटेंट करने वाले देश का नाम तथा पेटेंट नम्बर, पेटेंट स्वीकृत होने की तिथि तथा एब्स्ट्रैक्टिंग सर्विस का पूरा संदर्भ दें, जैसे- जैन, ओम प्रकाश, यू एस पेटेंट 3425, 16 जुलाई 1992; कैमिकल एब्स्ट्रैक्ट्स, 77 (1993) 34256.

शोध पत्र

शोध-पत्र निम्नलिखित उपशीर्षकों के अन्तर्गत तैयार किया जाना चाहिए :

- **शीर्षक :** यह न अधिक लम्बा और न बहुत ही छोटा होना चाहिए। यह ऐसा होना चाहिए कि जिसे पढ़कर ही लेख में प्रस्तुत सामग्री के विषय में अंदाज लग सके।
- **प्रस्तावना :** इसमें विषय के वर्तमान ज्ञान के स्तर के साथ ही शोध कार्य के महत्व का वर्णन किया जाना चाहिए। यह बहुत अधिक लम्बी नहीं होनी चाहिए।
- **सामग्री एवं विधि :** प्रयोग की गई विधि व सामग्री के स्रोत आदि का पूर्ण विवरण इस प्रकार दिया जाना चाहिए कि यदि कोई अन्य अनुसंधानकर्ता चाहे तो वह शोध-कार्य को दोहरा सके। यदि प्रयुक्त की गई विधि नई हो तो उसका विवरण विस्तार से करें अन्यथा केवल संदर्भ देना ही पर्याप्त है।
- **परिणाम :** केवल वही आंकड़े प्रस्तुत करें जो शोध कार्य से सीधे संबंध रखते हों, अध्ययन द्वारा प्राप्त किये गए हों तथा जो व्याख्या के लिए अनिवार्य हों। प्रामाणिक सारणियों, चित्रों, आंकड़ों आदि का प्रयोग भी किया जा सकता है। साथ ही सारणियों, चित्रों, आंकड़ों आदि का संदर्भ या स्रोत भी दें।
- **व्याख्या :** लम्बी व्याख्या न देकर शोध के परिणामों पर आधारित चर्चा ही प्रस्तुत करें। परिणाम के अन्तर्गत प्रस्तुत आंकड़ों आदि को पुनः न दोहरा कर व्याख्या को शोध-अध्ययन में प्राप्त नवीन परिणामों पर ही आधारित रखें।
- **आभार :** आभार संक्षिप्त और केवल उन्हीं के प्रति होना चाहिए जिन्होंने शोध-कार्य में किसी रूप में सहायता की हो।
- **संदर्भ :** इसकी व्याख्या पहले ही कर दी गई है।

समीक्षा-पत्र

समीक्षा-पत्र जैसा कि नाम से ही विदित होता है किसी विषय वस्तु में हुए विकास को तो दर्शाते ही हैं साथ ही उस विकास का विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में होने वाले प्रभाव की भी विवेचना करते हैं। समीक्षा-पत्र में लेखक के अध्ययन की गरिमा, अधिकार एवं दर्शन क्षमता का बोध होना चाहिए। अतः इन लेखों के लिए गत 8-10 वर्षों में सामयिक विषयों के विकास की विवेचनात्मक व्याख्या प्रस्तुत करें। लेख को सुग्राह्य बनाने के लिए सारणियों, चित्रों आदि का अधिकायिक प्रयोग करें।

संदर्भ समीक्षा-पत्र के प्राण होते हैं। उनका पूर्ण विवरण दें। बहुत प्राचीन संदर्भों, जो प्रायः पुस्तकों में सम्मिलित कर लिए गए हों, के उदाहरण न दें। संदर्भों की संख्या 100-125 से अधिक न रखें। संदर्भ लिखने के विषय में व्याख्या पहले ही कर दी गई है।

रीप्रिंट्स

रीप्रिंट्स के लिए कृपया संस्थान की वेबसाइट www.niscpr.res.in के अंतर्गत nopr का अवलोकन करें।

लेखकों की सूची

1.	अजवानी दीक्षिता	138	10.	मेंढे आत्माराम विनोद	102
2.	अनु	118	11.	शर्मा कुमार राजेंद्र	71
3.	गर्ग अतुल	124	12.	शर्मा प्रतिभा	71
4.	चौहान सिंह अशोक	97	13.	शर्मा सदानन्द	102
5.	जी शिव	83	14.	शर्मा हंसराज ऋषभ	102
6.	जैन कुमार राहुल	109	15.	शेखर ज्ञान	97
7.	नितिन	118	16.	सरवनन सुदर्शन	83
8.	प्रसन्ना के एन	118	17.	सक्सेना अर्चना	132
9.	मंगल आदर्श	97	18.	सिंह महेन्द्र	109